International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN :2581-9925, Impact Factor: 7.555, Volume 07, No. 02(II), April- June, 2025, pp. 179-182

आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन को मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल का योगदान

अशोक कुमार*

सहायक आचार्य – राजनीति विज्ञान, राजधानी पी.जी. महाविद्यालय, नारायणपुर।

*Corresponding Author: ashokkirad1990@gmail.com

सार

श्री रामकृष्ण परमहंस स्वामी विवेकानन्द अज्ञान, जड़ता व तमस से निष्पंद भारत में क्रियाशील ऊर्जा का विस्तार कर, उसके लुप्त गौरव की प्राप्ति के लिए भगीरथ प्रयास इस देश की पुरातन सन्यास परम्परा में हमेशा नया अध्याय था। शिकागों महासभा में मिली दिंगत प्रतिश्रुत सफलता के बाद उस विचार को आकार देने की दिशा में कदम उठाया गया। उनके लिए मातृभूमि का सर्वविध कल्याण सर्वोपरि था। राष्ट्र उत्थान की उनकी कार्य योजना का आधार श्री रामकृष्ण का ''आध्यात्मिक मानववाद'' था। श्री रामकृष्ण परमहंस की यह उक्ति कि 'क्षुधार्त व्यक्ति के लिए धर्म का कोई अर्थ नहीं है', मानव सेवा को समर्पित श्री रामकृष्ण मिशन की स्थापना की प्रेरणा स्रोत बनी। शिकागों महासभा में विवेकानन्द के आह्वान से प्रेरित होकर उनके मिशन के साथ जुड़े लोगों में मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल का स्थान अनन्य है। प्रमुखतः सत्यान्वेषी मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल को अपने मन को मथने वाली जिज्ञासाओं का समाधान विवेकानन्दजी से ही प्राप्त हुआ और एक प्रबल प्रेरणा उन्हें गुरुदेव के देश में खींच लायी। भारत में उनके समक्ष विशाल कार्यक्षेत्र था और विवेकानन्द को अपने मिशन की पूर्ति के लिए मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल जैसी ''सच्ची सिंहनी'' की ही आवश्यकता थी।

शब्दकोशः *राजनीतिक चिन्तन, राष्ट्रीयता, मानववाद।*

प्रस्तावना

मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल से निवेदिता तक की यात्रा बहुत कठिन थी किन्तु उन्होंने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। उनकी बौद्धिक तेजस्विता, वाग्मिता भी अद्‌भुत थी और अनेंक विषयों के गहन अध्ययन से प्राप्त विचक्षणता का उपयोग उन्होंने भारतीय समाज के अध्ययन व भारतीयों के मार्गदशर्न के लिए किया। विवेकानन्द की मान पुत्री के रूप में ही नही, गहरी सूझ–बुझ व अन्तर्दृष्टि वाले चिन्तक के रूप में आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन को उन्होंने समृद्ध किया।

उनका ध्येय भारत उसके लोगों के लिए आशा व उत्साह के परिपूर्ण समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण का विकास करना था। उन्होंने इस बात पर खेद व्यक्त किया कि भारतीय लोग समाजशास्त्रीय अध्ययन से इतने अनभिज्ञ थे। लेकिन उनका विश्वास था कि जब एक बार भारत में समाजिक अध्ययन पद्धति में निष्णात विद्वान आगे आ जाएँगे जो उन विधियों को भारत पर लागू करेंगे तब वे आधुनिक संसार के समक्ष अनेक नये रहस्योद्‌घाटन करेंगे।

'राष्ट्रीयता' की महान् विचारधारा में उन्हें ऐसे विचार के दर्शन हुए जिससे भारत को आवेष्टित हो जाना था। उन्होंने अपने लिए राष्ट्रीय आत्मचेतना को जगाने, राष्ट्र को जगाने भारत के स्वयं के एक संगठित इकाई होने की चेतना का संचार करने का कार्य चुना था। उनके अध्ययन का विषय भारतीय समाज था और उसके आदर्शो व परम्पराओं के जटिल तन्तुजाल का स्पष्टीकरण करने का कार्य उन्होंने स्वीकार कर लिया था। किन्तु

सामाजिक मसले में उनकी अभिरुचि अप्रत्यक्ष थी। उन्होंने लिखा था, मैं प्रकृति से राजनीतिक हूँ। राजनीति से विहिन संसार की मैं कल्पना नहीं कर सकती या कम से कम उसे आदर्श के रूप में नहीं देख सकती। फिर भी वे यह महसूस करती थी कि यह सच है कि स्वयं अपनी सामाजिक व्यवस्था से घृणा करने वाले लोगों को एक राष्ट्र के निर्माण हेतु प्रेरित नहीं किया जा सकता था। इस प्रकार अपने विस्तृत सामाजिक अध्ययन द्वारा उन्होंनें राष्ट्रीयता के विचार के लिए बौद्धिक आधार तैयार किया। उनके मतानुसार अभिनव आदर्शो की ओर पुरातन के माध्यम से और अपरिचित तक परिचित के माध्यम से पहुँचना है। आदर्श कभी नष्ट नहीं होते है। नया पुराने पर सदैव अध्योरोपित होता है, उसका स्थानापन्न कभी नहीं बनता। भारत का वर्तमान उसके अतीत में गहरे समाया हुआ था और उसके सामने एक स्वर्णिम भविष्य था। भारत में सामाजिक चेतना की कमी नहीं थी लेकिन अतीत में अपनी तल्लीनता के चलते उसे मध्यकालीन सामाजिक व्यवस्था के विगत प्रायः होने का भान नहीं था। उन्हें इस बात में सन्देह था कि क्या नवीन युग के लिए भारत के पास पर्याप्त ऊर्जा विद्यमान थी। मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल ने आलोचक के रूप में नहीं, गवेषक के रूप में भारतीय सामाजिक व्यवस्था, उसके सामाजिक स्वरूपों के पीछे क्रियाशील रचनात्मक आदर्शो का भविष्य की ओर उसके प्रयाण में वर्तमान के साथ उसकी कड़ी जोड़ने के ध्येय से अध्ययन किया। इस दृष्टि से वे न तो प्रतिक्रियावादी थीं और न सुधारवादी। उन्होंने 'सुधार' के नारे की जगह 'निर्माण' का आग्रह किया। उनका मानना था कि यदि कोई राष्ट्र के पुनर्निमाण का प्रारंभ उसके आदर्शो से करें तो समस्या का समाधान हो जाएगा और भविष्य का निर्धारण लोगों द्वारा अपनी स्वतन्त्र इच्छानुसार होगा। समाज के आंगिक विकास के उनके सिद्धान्त का आधार सामाजिक अवयवी की अवधारणा थी। उनका मानना था कि समाज एक अवयवी होता है किन्तु सजीव नहीं। वह अपनी ही भाक्तियों से परिवर्तित होता है अर्थात् सामाजिक परिवर्तन के कारण अन्तःस्थ होते हैं और ब्राह्य भाक्तियों के अपरिवर्तित रहने पर भी वे बदलाव आने सही है। इस प्रकार सामाजिक–सांस्कृतिक प्रक्रिया भीतर से होने वाली अवयवी वृद्धि थी। सभी नैगम निकायों के लिये यह सामान्य नियम था। स्वामी विवेकानन्द के विचारों से प्रेरणा ग्रहण करते हुए वे कहती हैं, राष्ट्र को अपने ही विकास पथ पर चलना होता है, जो उसके अपने अतीतकालीन इतिहास से निर्धारित होता है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार राष्ट्रीय जीवन आंगिक भाक्तियों का मसला है। हमें उस जीवन की तरंग को पुनः सतेज करना चाहिए।

भगिनी का अभिमत था कि शिक्षा से अधिक आवश्यक कोई वस्तु नहीं हैं एक या दूसरे रूप में शिक्षा समाज को प्रभावित करती हैं और समाज शिक्षा पर प्रभाव डालता है। किसी समाज के लक्ष्यो व आदर्शो को समझने का सर्वाधिक प्रभावी और प्रत्यक्ष तरीका उसकी शिक्षा व्यवस्था का अध्ययन करना हैं। अपने भारत प्रवास के दौरान उन्हे यहाँ की शिक्षण पद्धति के अध्ययनन का अवसर मिला। उनके अनुसार, ''जो हमारे स्वरूप की व्याख्या करता है और साथ ही आशान्वित करता हैं वही सच्चा शिक्षा प्रदान होता हैं।'' उन्होने निरीक्षण, खेल और सृजन के माध्यम से बच्चो को सिखाने वाली शिक्षा की आवश्यकता अनुभव की। औपरिक विक्टोरिया युगीन शिक्षा की दमघोटू जड़ता का उन्होने विरोध किया। वस्तुतः कक्षा उनकी प्रयोगशाला थी। शिक्षा के क्षेत्र में अपनी अभिरूचि के कारण ही निवेदता स्विस शिक्षाविद् और सुधारक सॉहान हेनरिख पेस्टालोजी के विचारों का जर्मन शिक्षाशास्त्री फ्रेडरिक फ्रॉयबेल के विचारों से तुलनात्मक अध्ययन की ओर आकृष्ट हुई। भारत में अपनी पाठशाला में स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा सम्बन्धी विचारों को कार्यरूप में परिणत करने वाली निवेदिता हरबर्ट स्पेन्सर व अन्य पश्चिमी चिन्तकों से काफी प्रभावित थीं। स्वामी विवेकानन्द ने स्पेन्सर व अन्य पश्चिमी चिन्तकों से काफी प्रभावित थी।

राष्ट्रीयता के सिद्धान्त की मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल की असाधारण रूप से मौलिक व्याख्या भारतीय राजनीतिक चिन्तन के इतिहास को उनका उल्लेखनीय योगदान है। राष्ट्र वस्तुतः समुदाय के एक प्रमुख प्रकार और राष्ट्रीय भावना को मनुष्य की प्रमुख भावना के रूप में स्वीकार किया जाता है। फिर भी सभी देशों में राष्ट्रवाद के विकास की प्रक्रिया एक जैसी नहीं रही है। प्रत्येक राष्ट्र का उद्भव व अग्रगामी प्रयाण एक विशिष्ट विधि से होता है। भारत में उनके सामने राष्ट्रीयता भाब्द को सही अर्थ प्रदान करने की समस्या थी, जबकि राष्ट्रीयता की उपलब्धि समस्याओं की समस्या थी। यह मात्र एक ब्राह्य सत्ता के नियन्त्रण से मुक्ति पाने की समस्या नहीं थी अपितु अलग–अलग प्रान्तों के विभिन्न भाषा–भाषी व विभिन्न धर्मावलम्बी लोगों में आन्तरिक

संसक्ति की भी समस्या थी। वे इस तथ्य से भली–भाँकम अवगत थी कि पश्चिमी विर्निदेशों के अध्ययन क्षेत्र में भारतीय समस्याओं का समावेशन नहीं होगा। राष्ट्रीयता को समझने में अपने अभिगम में वास्तविक होने के फलस्वरूप मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल द्वारा प्रस्तुत इसकी परिभाषा और व्याख्या एक अर्थ में अद्वितीय है। भारत को प्रदान किये जाने वाले राष्ट्रीयता के विचारों के सृजन से पूर्व भारतीय स्थितियों का व्यापक अध्ययन आवश्यक था, ऐसा उनका मानना था। राष्ट्रीयता के सामान्य पहलुओं को स्पर्श करते समय वे इस सिद्धान्त का स्पष्टीकरण एंव व्याख्या प्रस्तुत करती है। उनके दृष्टिकोण में भारतीयता की महक है। इस प्रकार उन्हें भारतीय राष्ट्रीयता की भाष्यकार व सर्जक माना जाता है। उनका राष्ट्र सम्बन्धी सिद्धान्त पश्चिमी राष्ट्रीयताओं के अध्ययन के आधार पर निर्मित सिद्धान्त से कुछ सीमा तक भिन्न है। 'राष्ट्रोद्भव का आधारभूत नियम' मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल ने प्रादेशिक सिद्धान्त से प्राप्त किया है। प्रादेशिक प्रभाव सिद्धान्त के मुख्य प्रतिपादक गिडिस थे, जिनसे उन्होंने प्रादेशिक व व्यावसायिक विकास का सिद्धान्त चाव से ग्रहण किया। उनके लिए नस्ल, धर्म और भाषा की अपेक्षा भौगोलिक कारक अधिक महत्वपूर्ण थे। वे कहती हैं, मनुष्य अपने घर के निर्माण से ही प्रारंभ करता है और उसके पुनर्निर्माण से समापन करता है। स्थान की आंगिक परिस्थितियों से एक हुए लोगों को न तो नस्ल, न भाषा और न धर्म विभक्त कर करता है। उन्होंने भौगोलिक क्षेत्र पर दो पहलुओं से विचार किया है। एक तो तन–समूह का पालन करने वाली माँ के रूप में और दूसरे प्रजातीय ऊर्जा की संतान के रूप में। राष्ट्रीयता की अवधारणा के जन्म के लिए पश्चिम ने संसक्ति के प्रेरक के रूप में स्थान व देश को प्रतिष्ठा प्रदान की। भारतीय अनुभव ने उनके इस विश्वास को दृढ़ कर दिया कि स्थान से प्रेरित एकता जो संप्रवाही नस्ल तत्वों की संभावनाओं से वृद्धिमान होती है, वही निर्णायक होती है। उनका कहना था पूर्व मानवाशास्त्रीय तरीके से सोचने की ओर अधिक उन्मुख था। वह सिद्धान्त भारतीय राजनीतिक चिन्तन को उनकी विशिष्ट देन है।

इस प्रकार राष्ट्र मानवता के अंगों के रूप में विशिष्ट कार्य पूर्ण करते है। उनका मानना है, 'मानवता अपनी शिक्षाओं को दोहराती नहीं है। उनके महान् राज्य के एक हिस्से में जो कुछ होता है, दूसरों से वह उसे लेने व प्रयोग करने की उम्मीद करती है।' आज जबकि आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त तत्वों की जटिलता को राष्ट्र–निमार्ण मे अवरोध नहीं मानना है, वह इस सीमा तक आगे नहीं जाता कि जटिलता को उसकी भाक्ति घोषित करें या विश्व समुदाय में राष्ट्र के दर्जे का आधार माने।

निष्कर्ष

स्पष्ट है सत्य की खोज में मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल सामान्य सिद्धान्तों एवं धारणाओं से बहुत परे चली है। उन्होंने दूसरे समाज भाास्त्रियों के जाँच–निष्कर्षो को केवल दोहराया भर नहीं है अपितु उनमें अपनी खोजों को भी जोड़ा है। यहाँ यह भी कहा जा सकता है कि उन्होंने सिद्धान्तों से जो कुछ सीखा था, उसे अपने चिन्तन का हिस्सा बनाने के साथ ही तथ्यों के प्रत्यक्ष ज्ञान को उसमें जोड़कर व्यवहार मे उनकी क्रियान्विति की जाँच की। आंगिक एकता के सिद्धान्त पर अभी पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है लेकिन यदि इसे व्यवस्थित तरीके से विकसित किया जाय जो मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल के विचार राष्ट्रीय एकीकरण में सहायक होंगे। यह केवल राष्ट्र निर्माणकारी सूत्र ही नहीं है। अपितु राष्ट्रीय बिखराव की व्याधि से ग्रस्त देशों की समस्याओं के संदर्भ में बहुत प्रासंगिक है। भारत स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी आन्तरिक संसक्ति की समस्या से जूझ रहा है और एकता की सच्ची भावना विकसित करने में सफल नहीं हो पाया है। यदि लोग मार्गरेट एलिजाबेथ नॉबुल के चिन्तन प्रवृत्ति की दिशा एवं प्रकृति को समझ सके तो वे भारतीय संस्कृति की उल्लेखनीय समरसता व सुसम्बद्धता को अनुभूत कर सकेंगे। संश्लेषण निर्माण की इसकी अद्वितीय क्षमता भी उभर कर सामने आएगी जिसने युगों तक इसके सुगठित सामाजिक ढ़ाँचे को अक्षुण्ण बनाये रखा। उन्होंने प्रादेशिक अर्थ में भी एकता का भाुक्ष्म रूप देखा, जहाँ भाषा, धर्म आदि की ऊपरी विभिन्नताओं के बावजूद सम्पूर्ण की प्रत्येक द्वारा विशेष तरीके से सेवा की जाती थी। यही भारत की एकता का प्रमाण था। हिन्दू और मुसलमान, दोनों समुदाय राष्ट्रीयता के निर्माण के लिए आवश्यक है। एक जनसमूह जो आवास और हितों की दृष्टि से एक हों, उनके लिए यह आवश्यक नहीं है कि पारस्परिक सुसम्बद्धता को अनुभूत करने हेतु एक भाषाभाषी हो या एक पुराणाशास्त्र में विश्वास करें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कश्यप, सुभाष – भारत का सांविधानिक विकास व स्वाधीनता संघर्ष।
2. गांधी सम्पूर्ण वाग्मंय – खण्ड़ 14, 15, 21, 24, 25, 28, 40 दिल्ली 1958।
3. चतुर्वेदी जगदीश प्रसाद– गोविन्द बल्लभ पंत, भूमिका लेखक श्री रंजन 1988।
4. चन्द्रा, प्रो. विपिन – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष , हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय नई दिल्ली 1998 संशोधित संस्करण।
5. जोशी, श्रीमती सुधा – कुरूमांचल केसरी, हैदराबाद 1970।
6. ज्योतिर्विद, पं. रामदत्त – पंत कुल की वंशावली।

❖◆❖